International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 606-610

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में भक्त वाणी

हरबंस सिंह
शोधार्थी, जैन विद्या एवं तुलनात्मक धर्म तथा दर्शन विभाग जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, राजस्थान, भारत।

1. प्रस्तावना

मानव मूल्यों का अथाह कोष, भारतीय संस्कृति की सुदृढ़ आधारशिला, नैतिकता एवं आदर्श का प्रतिमान, सिक्ख धर्म, दर्शन एवं संस्कृति का पूजनीय ग्रंथ, 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' मानव समाज के सर्वपक्षीय कल्याण के लिए अकाल पुरूष का एक अलौकिक उपहार है। सच्चे मोतियों का सागर एवं पवित्र विचारों का भण्डार है। पंचम पातशाह श्री गुरु अर्जुन देव जी की दिव्य दृष्टि के फलस्वरूप यह 1604 ई. में रूपायित हुआ। सारे संसार के लोगों के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब अकाल पुरूष का शब्दिक गुरु स्वरूप है। इसके अंतर्गत 36 महापुरूषों की वाणी संकलित है जो भारत के अलग–अलग क्षेत्रों, पृथक–पृथक धारणाओं, धर्मों, विश्वासों से संबंधित है। उनमें 6 गुरु साहिबान, 15 भक्त, 4 गुरु घर के सेवक, 11 उच्चकोटि के भाट कवि आदि सम्मिलित है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरुओं ने ऊंच–नीच, धनी–निर्धन, अन्य धर्म सम्प्रदाय और समाज की जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियों और पुरानी परम्पराओं का विरोध कर एक ऐसे समाज निर्माण का संदेश दिया जिस में सभी सामाजिक विषमताएं और विषादो का अंत हो जाए। उन्होंने एक दक्ष माली की तरह समाज रूपी बगीचे को सुरम्य बनाने का कार्य किया। इस में ग्रहस्थ जीवन को मान्यता, कर्मयोग का प्रतिपादन, नाम स्मरण, गुरु महिमा, नारी के प्रति आदर्श भाव, जाति–पाँति का विरोध तथा नैतिक मूल्य इत्यादि नवीन आदर्शों पर प्रकाश डाला गया है। वे सभी आदर्श मूल्य जो कि समाज की धूल से आच्छादित हो गए थे, गुरुओं ने उस धूल को झाड़–पोंछ कर नवीन जीवन मूल्यों की स्थापना की।

सन् 1708 में गुरु गोविंद सिंह ने नांदेड (महाराष्ट्र) में अपने देहावसान पूर्व 200 वर्षो से चली आ रही देहधारी गुरु परम्परा को विराम दे दिया और इस ग्रन्थ को गुरु पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। व्यक्ति गुरु का स्थान 'शब्द गुरु' ने ले लिया। उस समय से इसे गुरु ग्रंथ साहिब का नाम मिल गया। यह ग्रन्थ भारत की पांच शतियों के धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन का बहुत प्रामाणिक दस्तावेज है।[1] यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि यह ग्रन्थ उस युग के भारत के विभिन्न भागों के विचार चिन्तन को स्वर देने वाला एक महान ग्रंथ है।

आदि ग्रंथ में 15 संतों या भक्तों की वाणी भी प्राप्त होती है, जिसका उल्लेख इस प्रकार है:–

1. शेख फरीद, 2. जयदेव, 3. त्रिलोचन 4. नामदेव 5. संत वेणी, 6. संत सदना 7. स्वामी रामानन्द 8. संत कबीर 9. संत रविदास 10 संत पीपा 11. संत सेन, 12. संत धन्ना 13. भीखन, 14. संत परमानन्द 15. सूरदास।

बाबा फरीद, कबीर, नामदेव और रविदास की वाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अधिक सुनाई देती है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य प्रमुख संत, उच्च कोटि के समाजसुधारक, महान् भक्त, कबीरदास एवं संत रविदास की 'श्री गुरु गंथ साहिब' में संकलित वाणी एवं पदों की विशेषताओं का अध्ययन करना है।

2. कबीरदास

कबीरदास संत काव्य धारा के प्रमुख एवं प्रतिनिधि कवि माने जाते है। फिर भी अधिकतर विद्वान कबीर का जन्म सन् 1398 में तथा निधन सन् 1518 में स्वीकार करते है। उनकी माता का नाम नीरू और पिता का नीमा माना जाता है। नीरू और नीमा दम्पति जाति के जुलाहा थे। इनका अधिकांश जीवन काशी में बीता। इनके गुरु स्वामी रामानन्द थे। इन से ही कबीर जी ने दीक्षा ली थी। कबीर जी का कहना है ''काशी में हम प्रगट भये, रामानन्द चेताये।'' नाभादास के 'भक्तमाल', और अनन्तदास के 'प्रसंग पारिजात' से भी उक्त तथ्य की पुष्टि हो जाती है।

2.1 व्यक्तित्व

महात्मा कबीर जी सन्तोषी, उदार, स्वतंत्रचेत्त निर्भीक, सत्यवादी, अहिंसा, सत्य और प्रेम के समर्थक, साहित्य प्रेमी, प्रकृति से क्रांतिकारी एवं समाज सुधारक थे। वे मस्तमौला लापरवाह एवं फक्कड फकीर थे। वे जन्मजात विद्रोही थे और उनमें एक अदम्य साहस एवं अखंड आत्मविश्वास था। वे प्रखर प्रतिभा तथा विलक्षण एवं संशक्त व्यक्तित्व के स्वामी थे।

2..2 कबीर की रचनाएं

कबीर जी निरक्षर थे। उन्होंने स्वयं कोई रचना नहीं लिखी। कबीर जी की प्रसिद्ध रचना, 'बीजक' को प्रामाणिक माना गया है। इस में कबीर के उपदेशों का उनके शिष्यों द्वारा संकलन है। बीजक के तीन भाग है– 1. साखी 2. सबद, 3 रमैनी। कई विद्वानों ने कबीर के ग्रंथों की संख्या 57 से 61 मानी है। अनुराग सार, उग्रगीता, निर्भय ज्ञान, शब्दावली और रेख्ता आदि पुस्तकों को कबीर रचित कहा गया है। आदि ग्रंथ में संत कबीर के 292 पद और 249 सलोक संकलित है। जिनका योग 541 है।

2.3 कबीर वाणी की विशेषताएं

अध्ययनोपरांत कबीर जी की वाणी व पदों में निमलिखित विशेषताएं पाई जाती है–

2.3.1 ब्रह्म विचार

संत कबीर का ब्रह्म निराकार और निर्विकार है। वह समस्त विश्व में व्याप्त है। उसे बाहर कहीं भी खोजने की आवश्यकता नहीं, वह घट–घट में निवास करता हे। वह शून्य और निरंजन है। वह वर्णनातीत और हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मण तथा शूद्र सबके लिए एक सा है। उसकी प्राप्ति प्रेमानुभूति तथा सहज समाधि से संभव है। ब्रह्म की प्राप्ति गुरु के बिना असम्भव है।

कबीर का कथन है

''जाके मुंह माथा नहीं, नांहि रूप–कुरूप।
पुहुप वास ते पातरा, एको तत्व अनूप।''

संत कबीर जी के अनुसार ब्रह्म अनिर्वचनीय है। उसका पार नहीं पाया जा सकता। इस संदर्भ में वे कहते हैं

''मैला ब्रह्म मैला इंदु
रवि मैला मैल मैला है चन्दु।
मैला मलता इहु संसार।
इकु हरि निरमलु जा का अंतु न पाय।।''[2]

संत कबीर ब्रह्म के विषय में कहते है कि वह अगम, अगोचर, अज्ञेय और निर्विकार है। इस संदर्भ में संत कबीर का कथन है

''अगम अगोचर रहिआ अभअंत
पाय पावै को धरतीधर मंत।।''[3]

2.3.2 जीव संबंधी विचार

संत कबीर की जीव संबंधी उक्तियां विचारात्मक और भावात्मक है। वास्तव में कबीर का जीव तत्व वर्णन ब्रह्म निरूपण का समानांतर है। यही कबीर वाणी की विशेषता है। संत कबीरदास आत्मा का वर्णन करते हुए कहते हैः

''न इह मानसु न इह देऊ। न इहु जती कहावै सऊ।
न इहु जोगी न अवधूता। न इसु माइ न काहूं पूता।
गुरु प्रसादि मैं डगरो पाइयो। जीवन मरनु देऊ मिटवाइया।
कहु कबीर इह राम की अंसु। जस कामद पर मिटै न संसा।।''[4]

संत कबीर जी जीव को कहते है कि जीव की इस संसार में दो कोटिया है– ज्ञानी और अज्ञानी। ज्ञानी शरीर में रहता हुआ भी मुक्त है और परमात्मा के साथ एकीकृत है। अज्ञानी शरीर में रहते माया के जाल में फंसकर दुःख भोगता है ऐसा जीव कर्मो के वशीभूत कई जन्म भोगता है –

''अंधकार सुखि कबहि न सोई है।
राजा रंकु दोऊ मिली है।
जउपै रसना रामु न कहिबों
उपजत बिनसत रोवत रहिबो।।[5]''

जीवात्मा स्वयं कर्म करती है और भोग भी, पांच तत्वों के इस शरीर के नाश के साथ जीवात्मा मुक्त हो जाती है। ऐसा संत कबीर का मानना है।

2.3.3 जगत संबंधी विचार

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित संतों की वाणी का जगत विषय में अपना निजी दृष्टिकोण है क्योंकि उन्होने अद्वैतवादियों की भान्ति जगत की परामार्थिक सत्ता स्वीकार नही है। नाथ योगी जगत के विषय में मौन है। संत कबीर जगत को क्षणभंगुर, स्वप्न के समान नश्वर मानता है। जगत के व्यवहारिक स्वरूप को यह स्वीकार तो करते है परन्तु उसके प्रति वैराग्य की भावना होना जरूरी है। कबीर जी इस जगत को रूपात्मक और देश काल की सीमाओं में बंधा हुआ मानते है। कबीर जी जगत और मनुष्य को समानान्तर कर इनकी नश्वरता को पेश किया है। कबीर जी कहते है

''उपजै निपजै निपजित समाई।
नैनहु देखन इहु जगु जाई।।
लाज न मरहु, कहहु धय मेरा।
अन्त की बार नहीं कछु तेरा।।''[6]

संत कबीर जी ने जगत की उत्पत्ति का कारण एक ओंकार को माना है। वह उपनिषदों वाला ही दृष्टिकोण है। सृष्टि का दूसरा कारण नूर है।

अव्वल अल्लाह नूर उपाया कुदरत के सब बंदे
एक नूर ते सब जग उपजिआ, को भले को मन्दे।।''[7]

संत कबीर जगत के संबंध में दृश्य और अदृश्य का शब्द बिम्ब भी पेश करते है। दृष्ट मिथ्या और नश्वर है। अदृश्य स्वतन्त्र है और परतन्त्र माया तथा दृश्य को कबीर ने झूठा सिद्ध किया है।

2.3.4 माया संबंधी विचार

संत कबीर जी माया से मुक्त पाने के लिए प्रयत्नशील है। यदि माया का काम जीव को अपनी लपेट में लेने का है तो जीव का काम माया से मुक्त होने का है। कबीर वाणी में माया का निवारण दो प्रकार का है। पहला प्रभु कृपा, दूसरा ज्ञान प्राप्ति। ज्ञानी व्यक्ति माया के प्रति उदासीन हो जाता है। परमात्मा की कृपा से ज्ञान प्राप्त मनुष्य माया के भ्रम जाल को तोड़ देता है।

''संत भागि उह पाछै परै।
गुर परसादी मारहु डरै।
कहु कबीर अब बाहर परी।
संसारे कै अंचलि लरी।।''[8]

संक्षेप में कहा जा सकता है कि गुरु ग्रंथ साहिब के संत वाणीकारों ने माया से बचने के लिए कहा है। उनके अनुसार माया व्यक्ति को नष्ट कर देती है। केवल सदगुरु की प्राप्ति से माया से छुटकारा पाया जा सकता है।
कबीर के अनुसार संसार के संपूर्ण पदार्थ, धन दौलत, ऐश्वर्य, विलास की सामग्री, सुख के उपकरण माया के प्रतीक है। इसी से सतर्क करते हुए उनका कथन है–

माया महाठगिनी, फंदा ले बैठी हाट।
संकल जग फंदे परया, गया कबीरा काटि।

2.3.5 सत्संगति की महिमा

कबीर जी की वाणी में सत्संगति की महिमा मुक्तकंठ से गाई है। संतो के अनुसार साध की संगति से भगवत प्रेम दूना हो जाता है। संतों की संगति हमेशा मनुष्य के जीवन को सुखमयी बनाती है।

कबीर संगति कहिऔ साधु की अति करै निरबाहु।
साक्त संगु न किजीऔ जाते होई बिनाहु।।[9]

संत जिस मार्ग पर चलता है, उसी मार्ग पर चलना सदा उत्तम है। संत के दर्शन मात्र से पवित्रता आती है। संत कबीर के अनुसार संत की भेंट नाम स्मरण कराती है। सेवा करने के ढंग दो ही है। एक संत दूसरा राम। राम मुक्तिदाता है और संत नाम स्मरण कराने

वाले। करोड़ो असन्तों के मिलने पर भी सन्त अपने सदगुण नहीं छोड़ते। सांपों से आच्छादित होने पर चन्दन अपनी शीतलता नहीं खोता।
कबीर जी के अनुसार सत्संगति से ही परमगति प्राप्त होती है। इसे ध्यान में रखकर ही हरि पिण्ड है और पिण्ड में हरि है। हरि सर्वमय और निरन्तर है। इस सिद्धांन्त को मानने वाले संत कबीर ने कहा हैः–

''कह कबीर अब जानिआ सन्तन रिदै मंझारि।।''[10]

3. संत रविदास –
रविदास रामानन्द की शिष्य परम्परा में थे। कबीर के समकालीन सन्तों में इनका नाम बड़े आदर से लिया जाता है। आप आयु में कबीर से भी बड़े थे। इन्होंने स्वयं अपनी जाति चमार बताई है। ''कह रैदास खालिस चमारा'' इनके महत्त्व को बढाने के लिए इन्हें पूर्व जन्म में ब्रह्मण बताया गया है। ऐसा प्रसिद्ध है कि ये नित्यप्रति ढोरों का व्यवसाय करते हुए माया का परित्याग करके भगवद् दर्शन में समर्थ हो सके थे। आप काशी में रहते थे। संत रविदास पढ़े लिखे नही थे। मीरा बाई ने इन्हें अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है। चमार जाति के लोग अपने आपको रविदास कहते है।
संत रविदास जी का जन्म 1384 से 1514 ई के बीच माना जाता है।[11] निश्चित समय अभी तक ज्ञात नहीं हो सका। ये बनारस के निवासी थे। इन्हें कबीर के गुरु भाई और रामानन्द के शिष्य बताया गया है। रविदास जी को ब्रह्मणों ने उस समय बहुत अपमानित किया था। इसलिए इनकी वाणी में नीच जाति के रक्षक भगवान को पुकारने के स्वर अधिक ऊंचे सुनाई पड़ते है। रविदास जी के श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 41 पद संकलित है।
इन पदों की भाषा सरल और स्पष्ट है। उनकी भाषा खड़ी बोली के निकट है। इनके काव्य में अधिकत्म रचना ईश्वर माया, सृष्टि, गुरु नाम तथा प्रकृति से संबंधित है। प्रभु पर किए मीठे व्यंग्य और चुटकियों (यथाः जड पै हम न पाप करता अहे अनता, पतित पावन नाम कैसे हुंता) से प्रभु के साथ इनका नैकटय प्रतीत होता है।

3.1 रविदास वाणी की विशेषताऐं
गुरु रविदास की वाणी मानव को आदर्श एवं दिव्य मनुष्य बनाने में सहायक है। उनकी वाणी एवं पदों का मूल स्वर निम्नलिखित हैः

3.1.1 ब्रह्म का विचार
संत रविदास ने ब्रह्म के अपार रूप का वर्णन किया है, परन्तु ब्रह्म के व्यक्त रूप का निरूपण भी कही–कही मिल जाता है। इस में संत जी का भक्त ह्रदय भावावेश में आकर अपनी रहस्यानूभूति और भक्ति भावना को अभिव्यंजित करता है। इस रूप में इनका ब्रह्म निर्गुण ही बना रहता है। संत रविदास जी के अनुसार परम तत्व केवल एक है। वही एक विश्व में अनेक रूप धारण करके घट–घट में व्याप्त रहता हैः–

''एक ही एक अनेक होइ विसधीरओं।
ज्ञान रे आन भरपूरि सोऊ। रहाउ।।''[12]

संत रविदास ने परम तत्व को नाम स्वरूप भी कहा है। इन्होंने अपनी जगत प्रसिद्ध ''आरती'' में ब्रह्म के नाम की प्रशंसा की हैं। ब्रह्म का नाम ही मात्र सत्य है। उसके बिना सब कुछ मिथ्या है। वही नाम सर्वत्र संसार में व्याप्त है, उसी की उपासना श्रेयस्कर है। आरती की कुछे पंक्तिया अवलोकनीय है–

''नाम तेरो आरती भजनु मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे संगल पासारै।। रहाउ।।
नाम तेरे की जोति लगाई भईओ उजिआरो भवन रागतारे।।[13]
दसअठा अठसठे चाटे खाणी इहै बरतणि हे सगल संसारे।।
कहै रविदास नाम तेरी आरती सतिनामु है हरि भोग तुम्हारे।।''[14]

संत रविदास जी ने मन रूप में तो ब्रह्म का निरूपण नहीं किया है, परन्तु मन की उस अवस्था का वर्णन किया है, जिसमें वह परमात्मा तत्व में रहता है मन की जैसी अवस्था को उन्मन मन कहा गया है।

''उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट।।
भगत जृगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि निकार।।''[15]

इस प्रकार मन उन्मनि अवस्था में रहकर परम तत्व के निर्गुण और सगुण रूप को एक ही रूप मानता है।
निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि रविदास जी निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक थे। इन्होंने ब्रह्म के अव्यक्त और व्यक्त दोनो रूपों को व्याख्यायित किया है। ब्रह्म के साथ अनेक संबंध भी स्थापित किये है। वह दयालु है, स्वामी है, सर्वशक्तिमान है, सर्वव्यापक है। वह सत्य स्वरूप है। वह घट–घट में रमण करता है। रविदास के अनुसार उनका ब्रह्म अकथनीय है।

3.1.2 जीव संबंधी विचार
संत रविदास जी ने आत्मा का वर्णन अद्वैत वेदान्त के अनुसार किया है। इन्होंने कहा है कि ब्रह्म और जीवात्मा एक ही है, जैसे सोना और सोने से बने गहने तथा जल और उसकी लहरों में कोई अन्तर नहीं होता, वैसे ही जीवन और परम तत्व में मूलतः अन्तर न ही है। यही विचार उनकी वाणी में स्पष्ट कहे गए है।

'तोही–मोही मोही–तोही अंतय कैसा ।
कनक कटिक जल तरंग जैसा।।'[16]

संत रविदास जी ने आत्मा को परम तत्व का अंश माना है। आत्मा परमात्मा दोनों एक है। वस्तुतः दोनों अभिन्न है। आत्मा ही जब माया के प्रभाव से अपनी अलग सत्ता समझने लगता है, वह जीव कहलाता है। यह जीव शरीर के नष्ट हो जाने पर नष्ट नहीं होता क्योंकि यह अमर हैं। जीव से रहित शरीर केवल हड्डियों और मांस का ढेर है। रविदास जी कहते है–

''जल की भीति पवन का धब्बा रक्त बूंद का गारा।
हाड मांस की नाडी को पिंजय पंखी बसै विचारा।।''[17]

संत रविदास जी के अनुसार जीव माया आदि के भ्रम जाल से जब मुक्त होता है, तब पुनः अपने अंशी अर्थात परमात्मा में लीन हो जाता है। अंत में जीव संबंधी विचार व्यक्त करते हुए गुरु रविदास जी का कथन है–

माटी को पुतरा कैसे नचतु है।
देखै देखै सुने बोल दउरिओ फिरतु है।

जब कुछ पावै तब गरबु करत है।
माइया गई तब रोवनु लगत है।।
मन बच करम रस किसहि लुभाना।
विनसि गइआ जाई कहूं समाना।।
कहि रविदास बाजी जगु भाई।
बाजीगर सउ मोह प्रीति बनि आई।।[18]

3.1.3 जगत संबंधी विचार

संत रविदास जी ने जगत का विचार दो रूपों में वर्णित किया है। पहले सैद्धान्तिक रूप में से यह जगत मिथ्या है, नश्वर है। परमात्मा इसका रचयिता है जो कि अनश्वर है। संसार की नश्वरता की उपमा कुसुम्भा के फूल से की गई है

''जैसा रंगु कसुभ का वैसा इहु संसार
मेरा रमाईए रंग मजीठु का कहु रविदास चमारा।।''[19]

एक अन्य स्थान पर रविदास जी ने संसार को नश्वर बताया है–

''बिनु देखे उपजै नही आसा।
जो दीवै सो होई बिनासा।।''[20]

संत रविदास जी के अनुसार यह संसार नश्वर है। वे एक राजा का उदाहरण देते कहते है कि जैसे एक राजा सोते समय स्वप्न में भिक्षुक बन जाता है और अपने समृद्ध सम्पन्न राज्य को खो जाने पर दुःख का अनुभव करता है परन्तु सुबह होते ही रात में खोए हुए राज्य को पुनः प्राप्त कर लेता है और राज्य के दुःख को स्वप्नवत मिथ्या और अस्तित्व हीन मानता है। ऐसे ही प्रभु ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् यह संसार और इसके दुःख आदि अस्तित्वहीन लगते हैं।

''नरपति एक सिंघासिन सोइआ सुपने भइआ भिखारी।
अछत राज धिरन दुःख पाइआ सो गति भई हमारी।।''[21]

संत रविदास जी ने सैद्धान्तिक रूप से भले ही संसार को मिथ्य और नश्वर कहा है परन्तु व्यवहारिक रूप से उसे मनुष्य के लिए कर्म क्षेत्र माना है।

3.1.4 माया संबंधी विचार

संत रविदास के अनुसार परमात्मा की माया उत्पन्न व्यापक और प्रबल है। इसकी मोहिनी शक्ति ने समस्त संसार को दुखी किया हुआ हैं। इस ने सारे संसार को खा लिया है। यह इतनी प्रबल है कि सुर–नर–मुनि भी इसके वशीभूत है। इस प्रकार माया का प्रभाव देवताओं से लेकर साधारण जीवों तक दिखाई पड़ता है। समस्त संसार में जीव इसके हाथों बिके हुए है। यह सामान्य जीव की बुद्धि भ्रष्ट कर देती है।

''कहीअत आन अचरीअत आन कछु समझन परै अपर माइआ।
कवि रविदास उदास दास मति पर हरि कोप करहु जीअदइआ।।''[22]

संत रविदासजी ने काया के सूक्ष्म रूप का वर्णन भी किया है। सूक्ष्म माया वर्णन में मनुष्य के आंतरिक मनोविकारों का चित्रण हुआ है। इन मनोविकारों में प्रमुख है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार तथा सत रज, तम आदि गुण उन्होंने माया को स्वतंत्र सत्ता न मानकर परमात्मा के अधीन माना है। माया के स्थूल और सूक्ष्म दोनों का भ्रम मिथ्या है। इनसे बचने के लिए गुरु की शरण लेनी जरूरी है। गुरु माया के प्रपंचों से बचने के लिए परमात्मा भक्ति का मार्ग दिखाता है और जीव माया के प्रभाव से बच जाता है।

3.1.5 सतसंगति की महिमा

संत रविदास जी की वाणी में सत्संगति को बहुत महत्त्व दिया गया है। इस के बिना मनुष्य जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। संत रविदास जी की वाणी में कहा गया है कि साधु की सत्संगति के बिना भाव उत्पन्न नहीं होता और भाव बिना भक्ति संभव नहीं।

''साध संगति बिनु भाउ नहीं उपजै।
भव बिनु भगति नहीं होई तेरी।।''[23]

सत्संगति से ही परमगति प्राप्त होती है। इसे ध्यान में रखकर ही ''हरि में पिण्ड है और पिण्ड में हरि'' है। हरि सर्वमय और निरंतर है।

गुरु रविदास जी के अनुसार सत्संगति सज्जन पुरूषों और साधुओं सान्निध्य में मिलती है। ये साधु पुरूष व्यक्ति को भक्ति का सही मार्ग दिखा कर उसे मुक्ति के पथ की ओर अग्रसर करते है। ऐसी सद् भक्ति का वर्णन करते हुए रविदास जी कहते हैं:–

''भगति ऐसी सुनहु हे भाई। आइ भगति तब गई बडाई।।
कहा भयो नाचे अरू गाये, कहा भयो तप कीन्हों।
कहा भयो जे चरण पखारे, जो लौ तत्व न चीन्हें।
कह रैदास तेरि भगति दूरि है, भाग बड़े वो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक चुनि खावै।।''[24]

4. उपसंहार

प्रस्तुत शोध पत्र का महत्व इस बात में निहित है कि शोधार्थी एवं पाठकों को संत कबीर और संत रविदास की वाणी में वर्णित विशेषताओं से अवगत कराना है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब को मानव मूल्यों का विश्व कोष कहा जाता है। इस में संकलित संतों, भक्तों, चिन्तकों और महापुरूषों की वाणी को पढकर मन को अदभुत शांति और संतोष की प्राप्ति होती है। कबीरदास तथा रैदास हिन्दी साहित्य को अपनी पावन वाणी से समृद्ध करने वाले ऐसे महान कवि है। भक्ति रस और शांत रस से युक्त मधुक्कड़ी भाषा में रचित उनके दोहे और पद व्यकुल जन को अपूर्व सुख तथा सुकून प्रदान करते है। प्रस्तुत शोध पत्र की यही सीमा है कि उनकी वाणी की विशेषताओं से छात्रों को अवगत करवा के उन के जीवन को मूल्यपरायण बनाया जा सके। इस शोधपत्र के अंतर्गत उनकी वाणी में वर्णित ब्रह्म, जीव, जगत, माया तथा संत्संगति शीर्षकों के अंतर्गत गहन विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। महात्मा कबीर तथा संत रविदास की वाणी निश्चित रूप से मानव कल्याण का पंथ प्रशस्त करती है और इसी में मानव का मोक्ष निहित है।

संदर्भ

1. डॉ. महीपसिंह, आदिग्रथ (संस्कति एवं सामाजिक अध्ययन) राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली–2001 पृ. 1।
2. गुरु ग्रंथ साहिब, रागु भैरउ वाणी संत कबीर, पृ. 1157
3. वही पृ. 1159
4. वही, रागु गौड़, वाणी संत कबीर, पृ. 771
5. वहीं, राणु गउड़ी, वाणी संत कबीर, पृ. 324
6. वहीं, वहीं, वहीं, पृ. 325
7. वही, रागु प्रभाती, वही, पृ. 1349

8. वहीं रागु गौड़, वही, पृ. 872
9. वही, श्लोक वही, बही, पृ. 1369
10. वही रागु गठड़ी, वाणी संत कबीर पृ. 344
11. डॉ. मनमोहन सउगल, गुरु ग्रंथ साहिब (एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण) भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला 1971 पृ. 25
12. गुरु ग्रंथ साहिब, रागु मुलार वाणी संत रविदास पृ. 1293
13. वही रागु धनसरी, वाणी संत रविदास, पृ. 694
14. वही, रागु धनासरी, वाणी संत रविदास, पृ. 694
15. वही, रागु गउड़ी, पृ. 30
16. वहीं, रागु सिरी वाणी संत रविदास, पृ. 96
17. वही, रागु सोरिठ, वही पृ. 659
18. डॉ. शिव कुमार शर्मा, कवितालोक, पब्लिकेशन ब्यूरों, पजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ 2006, पृ. 20
19. गुरु ग्रंथ साहिब, रागु गउड़ी, वाणी संत रविदास, पृ. 346
20. वही, रागु भैरउ, वही पृ. 1167
21. वही रागु सोरठि, वही पृ. 658
22. वही, रागु गुजरी,वाणी संत रविदास, पृ. 525
23. वही, रागु धनासरी वाणी संत रविदास, पृ. 694
24. डॉ. शिव कुमार शर्मा, कवितालोक, पब्लिकेशन, ब्यूरो पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ. 2006 पृ. 21